दिनांक 21.06.2016 को मराठी पत्रकार संघ की प्लेटिनम जयन्ती के अवसर पर माननीय लोक सभा अध्यक्ष का भाषण।

1. शहरों में शिकायत यह है कि लोकसभा चुनाव के मुद्दे इस देश के औसत वोटर को छूते भी नहीं। जो लोग कहते हैं कि यह चुनाव फूट और मज़बूत सरकार के बीच है, लेकिन उन्हें यह बोध सालता रहता है कि घर से दस मील दूर जो झोपड़े हैं, या पिछवाड़े ही जो गन्दी बस्तियां हैं, उनमें इन शब्दावली का कोई मतलब नहीं। वहां केवल नौन, तेल, लकड़ी के भाव महत्वपूर्ण हैं।

2. 26 जनवरी 1950 को जब भारत ने अपने आपको 'एक गणराज्य' घोषित किया, तब क्या औसत वोटर ने इस बात की जिद की थी कि उसे 21 साल की उम्र में वोट चाहिए, संसदीय लोकतंत्र चाहिए, केन्द्र और राज्य के बंटे हुए दायरे चाहिए। कानून के सामने समानता चाहिए। स्वाधीन न्यायपालिका चाहिए। छूआछूत का अन्त चाहिए। बुनियादी आज़ादियां चाहिए? अगर आप उसे राजतंत्र दे देते, और किसी के सिर मुकुट रख देते, तो भी (इस तर्क के अनुसार) औसत वोटर को क्या फर्क पड़ता? लेकिन, आज के देश के नागरिक को इन व्यवस्थाओं की जानकारी है और वे अपना हित–अहित जान सकते हैं। आज समाज के अंतिम पायदान पर खड़ा व्यक्ति भी सुविधाओं की, अधिकारों की बात करता है, तो यह हमारे लोकतंत्र की पहुंच को दर्शाता है।

3. लेकिन, भारत के प्रबुद्ध और राजनीतिक चेतना से युक्त मध्यम वर्ग ने सन् 1950 में वह संविधान अपनाया, जो कि देश के औसत ही नहीं बल्कि अंतिम वोटर को भी आगे–पीछे इस तंत्र में भागीदारी का अवसर देगा। पिछले चुनावों में जो बर्ताव हमारे औसत वोटर ने किया है, उसे देखते हुए नहीं कहा जा सकता कि

हमारे यहां प्रबुद्धों की सर्वानुमति और अप्रबुद्धों के बीच कोई बहुत बड़ी दीवार है। ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि नादानों के हाथों में वोट पकड़ा देने से बैलट का फैसला कभी राष्ट्रहित में बिल्कुल विपरीत चला गया हो, या कोई बेहद गलत चुनाव देश के मालिक कर बैठे हों। उसने समय, काल और परिस्थिति के अनुरूप हमेशा उचित निर्णय दिया है। जनता जर्नादन है।

4. देश में 1962 से 1968 तक आपातकाल लागू रहा। अनुशासन का स्तर सामान्य काल से भी ज्यादा नीचे गिर गया। लेकिन, जून 1975 में जो आपातकाल लगा, जनता को पहली बार महसूस हुआ कि शासन सचमुच सख्ती से शासन कर सकता है। दरअसल आपातकाल तो देश में दिसम्बर 1971 से लागू था, लेकिन विडम्बना की पराकाष्ठा यह है कि आपातकाल के दौरान शासन के कर्म एवं अकर्म से जो अराजकता की स्थिति पैदा हुई, उस पर काबू करने के लिए एक और आपातकाल लगाना पड़ा।

5. पश्चिम में दो तलवारें दो अलग–अलग म्यानों में रखी जाती हैं। दो नीतियों के लिए वहां दो अलग–अलग पार्टियां बन जाती हैं। लेकिन, भारत का चरित्र अद्वैतवादी है और 'बिड़ला और कॉमरेड डांगे' दोनों के साथ एक पार्टी खड़ी हो सकती है।

6. क्या चुनाव सिर्फ उन वर्गों का पंचवर्षीय टुर्नामेंट है, जिनके निजी स्वार्थ इस 'तंत्र' से जुड़े हुए हैं। हमारा तंत्र लोकतंत्र बहुत विशिष्ट है। इसमें निचले स्तर से लेकर ऊपरी स्तर के चुनाव तक की एक सतत् और व्यवस्थित प्रक्रिया है और हार–जीत चाहे जो भी होती रही हो, कई सवाल भी उठे हों, लेकिन सबसे बड़ा सदन जनता की अदालत ही है। विभिन्न प्रकार की मत भिन्नताओं के बावजूद भी आज हम दुनिया के सबसे बड़े और सफल लोकतंत्र हैं जो हमारे देश का दर्पण है।

7. सारे अन्तर्विरोधों के बावजूद यह एक सच्चाई है कि **''तीस सालों से (1947–1977)** अगर हिन्दुस्तान टिका हुआ है, तो वह एक प्रबुद्ध अखिल भारतीय शासनवर्ग के बूते पर ही टिका हुआ है। प्रजातंत्र एक प्रगतिशील और आधुनिक वैज्ञानिक संस्था है। लेकिन उसे भी जिन्दा और कायम रहना है, तो यह जरूरी है कि उसके अपने धार्मिक विधि निषेध हों, युग पुनीत लक्ष्मण रेखाएं हों। इसके साथ कहा जा सकता है कि भारत एक धड़कता हुआ प्रजातांत्रिक समाज है, जिसे अपनी सामूहिक काया का अहसास है।

8. अगर संविधान में यह लिखा है कि हर पांचवे साल लोक सभा के चुनाव होंगे, तो इसका मतलब यह है कि परिवर्तन की गुंजाइश को संविधान स्वीकार करता है। शासन परिवर्तन में निहित अस्थिरता को ही हम भयभीत होकर देखने लगे, तो चुनाव करवाने में क्या तुक है? जो देश अनेक विदेशी हमलों के बावजूद दो हजार साल से कायम है, वह क्या इतना छुई–मुई है कि अपनी जनता के बैलट से निकले निर्णय को झेल नहीं सकेगा।

9. प्रजातंत्र की दिन–प्रतिदिन नज़र आने वाली अस्थिरता का तानाशाही की उस ऊपरी शांति से कोई मुकाबला ही नहीं किया जा सकता, जो एकाएक ज्वालामुखी की तरह फट पड़ती है।

10. प्रजातंत्र में हम लड़खड़ाते, डगमगाते नज़र आते हैं, लेकिन फिर भी कायम रहते हैं। जबकि अन्य तंत्रों में हम हिमालय की तरह अमर नज़र आते हैं, लेकिन एकाएक भरभराकर गिर जाते हैं।

11. उदार प्रजातंत्र में कम से कम यह गुंजाइश तो है कि यदि हम गरीबी पर प्रहार न कर सकें, तो गरीब हम पर प्रहार कर सकें, और अपनी चेतना और जागरूकता के अनुपात से इस तंत्र में भागीदार बनें।

12. वोट भागीदारी की प्रक्रिया को प्रभावित कर सकता है। वह दरवाजे बन्द या खोल भी सकता है। वोट न देना भी एक किस्म का वोट ही होगा क्योंकि उपेक्षा के नतीजे तो आपको भुगतने ही होंगे। वैसे जनता बैलट बॉक्स के जरिए परिवर्तन कर सकती है।

13. अहिन्दी राज्यों में राजनेता, साहित्यकार और अख़बार नवीस के बीच अनोखे रिश्ते रहें। लोकमान्य तिलक उच्च कोटि के नेता थे। लेखक थे और पत्रकार भी। सर्वप्रथम, बंगाल या महाराष्ट्र में जब पुनर्जागरण आया, तो रचनाधर्मी लेखक और आन्दोलनकर्ता नेता के बीच कोई खाई नहीं थी। कन्हैयालाल मणिक लाल मुंशी नेता भी थे और गुजरात की सांस्कृतिक चेतना के प्रतिनिधि भी। राजाजी ने तमिल में लेखन किया और बंकिमचन्द्र का **''आनन्दमठ''** एक राजनैतिक दस्तावेज था, जिससे प्रभावित होकर अरविन्द घोष क्रान्तिकारी बने।

14. लोकमान्य तिलक भारत के पहले नेता थे जो अपने लिखे हुए शब्द की खातिर जेल गए। गांधी जी द्वारा चलाए गए स्वाधीनता संग्राम में कोई भी बड़ा नेता लगातार छह साल तक जेल में नहीं रहा, लेकिन तिलक रहे। 1908 में उन पर राजद्रोह का मुकदमा चला। मुहम्मद अली जिन्ना उनके वकील थे।

15. तिलक की बातें गांधी का पूर्वाभास देती हैं। मसलन सन् 1905 में वे कहते हैंः हमारे पास एक जबर्दस्त हथियार है, एक राजनैतिक हथियार है। उसका नाम है बहिष्कार। सन् 1919 से 1942 तक महात्मा गांधी ने जितने भी आंदोलन चलाए, वह

तिलक द्वारा प्रस्तुत थीसिस के दायरे के बाहर कहां जाते हैं? दरअसल अगर तिलक 15 साल पहले गांधी की जबान बोल रहे थे, तो इससे यही साबित होता है कि भारत अपने प्रतिभा के अनुसार युद्ध के औजार और युद्ध का चक्रव्यूह खोज रहा था और तिलक और गांधी दोनों एक ही खोज के अंग हैं। 1 अगस्त 1920 को तिलक जी का अवसान हुआ। 1 अगस्त को गांधी जी असहयोग आन्दोलन का उद्घाटन करने वाले थे। आन्दोलन नहीं हुआ। लेकिन, आध्यात्मिक सत्ता का हस्तांतरण हुआ।

16. सन् 77 के चुनाव में आजादी के बाद पहली बार देश में एक भूतपूर्व प्रधानमंत्री भी मौजूद रहीं। लेकिन आज भूतपूर्व राष्ट्रपति एवं भूतपूर्व प्रधानमंत्री का होना एकदम सामान्य बात है एवं सभी उन्हें सम्मान देते हैं। यह हमारे परिपक्व होते लोकतंत्र के हस्ताक्षर हैं। असहमति हो सकती है लेकिन सबको साथ लेकर चलना ही सुदृढ़ लोकतंत्र है। जब नवम्बर 76 में लोक सभा का कार्यकाल इमरजेंसी के दौरान एक साल के लिए बढ़ा दिया गया था, तब जनवरी 1977 में चुनाव की घोषणा हुई।

17. मीडिया को लेकर यह भी कहा गया था कि अब पहले वाली आजादी फिर कभी लौटने नहीं दी जाएगी। अन्य अख़बारों के साथ शाने गुरू जी का ''साधना'' भी बन्द हो गया था। इमरजेंसी इसलिए लगाई गई थी क्योंकि प्रतिपक्ष पर यह आरोप लगा कि वह अंदरूनी उपद्रव द्वारा सरकार का काम–काज लगभग असंभव बना रही है।